International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 10-09-2020; Accepted: 25-09-2020; Published: 11-10-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 5; 2020; Page No. 174-176

विद्यापति भक्त कवि थे अथवा श्रृंगारी

डॉ. सन्तोष कुमार पाण्डेय
सहायक आचार्यए वीरभूमि राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालयए महोबा, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
'विद्यापति भक्त कवि थे या श्रृंगारिक कवि? यह प्रश्न ही इस बात की ओर संकेत करता है कि विद्यापति के कृतित्व में कुछ ऐसा है जो उनको इस विवाद के घेरे में लाया। इस विवाद में एक और विवाद जुड़ा रहा कि विद्यापति रहस्यवादी कवि थे या नहीं। यह विवाद उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशकों से लेकर बीसवीं सदी के प्रथम दो तीन दशकों – लगभग अर्ध शताब्दी तक चलता रहा। विद्यापति रहस्यवादी थे या नहीं, यह प्रश्न यहाँ विवेच्य नहीं है। वैसे रहस्यवादी होना भी कहीं न कहीं से भक्त होने से सम्बन्ध रखता है। यह विवाद हिंदी साहित्य में बार–बार उठता रहा है। इस विवाद पर विस्तार से रोशनी डालते हुए किसी निष्कर्ष पर पहुंचना इस लेख का लक्ष्य है।

मूल शब्दः विद्यापति, श्रृंगारिकता, राधा, कृष्ण, आदिकाल, भक्ति आंदोलन, पदावली

भक्त कवि मानने वाले विद्वानों में डॉ. श्यामसुन्दर दास, प्रोफेसर विमान बिहारी मजूमदार, बाबू ब्रजनन्दन सहाय, नगेन्द्रनाथ गुप्त और डॉ. जनार्दन मिश्र प्रमुख हैं। इनके मत के अनुसार पदावली में चित्रित राधा–कृष्ण के श्रृंगार चित्रों में माधुर्य भाव की भक्ति प्रस्फुटित हुई है। बाबू श्यामसुंदरदास ने विद्यापति की भक्ति भावना पर विष्णुस्वामी और निंबकाचार्य के सम्प्रदायों का प्रभाव स्वीकार किया है। ग्रियर्सन उनकी सभी प्रार्थनाओं को वैष्णव मानते हैं। भक्त कवि मानने वाले विद्वानों का वर्ग अपने मत की पुष्टि में तर्क भी देता है, जैसे – चौतन्य महाप्रभु का विद्यापति के पदों का गाना। गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय विद्यापति के पदों का भजन कीर्तन चार पांच सदियों से करता रहा। विद्यापति के पदों में कृष्ण एवं राधा जैसे इष्ट देवों का नाम होना एवं यमुना, कदम्ब तरु, वंशी, मथुरापुरी इत्यादि कृष्ण से सम्बन्धित चीजों का होना। उपर्युक्त कुछ ऐसे तर्क हैं जिनके कारण ये लोग विद्यापति को भक्त कवि मानते हैं।

इन विद्वानों के विपरीत महामहोपाध्याय हर प्रसाद शास्त्री, विनय कुमार सरकार, सुभद्रा झा, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. राम कुमार वर्मा प्रभृति विद्वान विद्यापति को विशुद्ध श्रृंगारी कवि मानते हैं।

विद्यापति की पदावली के विभिन्न संस्करणों में संग्रहीत, पदों की संख्या 900 के लगभग है। इन पदों के 90ः से भी अधिक पद श्रृंगारी हैं। ऐसी स्थिति में विद्यापति को भक्त कवि कहना उचित नहीं होगा। विद्यापति स्वयं श्रृंगार को रसराज मानते थे और सुन्दरी तरुणी तथा कामिनी विलास को संसार का सार। इस प्रश्न के विवेचन में विद्यापति के व्यक्तित्व को न देखा जाना प्रासांगिक नहीं होगा। विद्यापति 'गीत गोविन्द' को आदर्श मानते थे और जयदेव से बहुत प्रभावित थे। जयदेव महाराज लक्ष्मण सिंह के सभा पंडित थे। अतः एक राज्य आश्रित कवि होने के कारण उन्होंने अपने 'गीत गोविन्द' की रचना अपने आश्रयदाता राजा की श्रृंगारी मनोवृत्ति को तृप्त करने के लिए की थी। जयदेव का अनुसरण करते हुए विद्यापति ने भी राधा को वैष्णव भक्तों की तरह श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देखा, अपितु एक विशुद्ध श्रृंगारी कवि की दृष्टि से उसका वर्णन किया। विद्यापति भी एक राज्याश्रित कवि थे और उन्होंने अपने आश्रयदाता राजा शिवसिंह को कृष्ण और उनकी रानी लखिमा देवी को राधा कहकर अनेक स्थानों पर सम्बोधित किया है –

1. 'राजा शिवसिंह रूपनरायन लखिमा देइ पति भाने।"
2. 'रानी लखिमा देइ बल्लभ एकल गुन निधान।"

गौरतलब है कि विद्यापति स्वयं रानी लखिमा देवी के रूप के चितेरे हैं और उसी की अभिव्यक्ति उन्होंने अपनी पदावली में किया है 'राधा' नाम तो एक बहाना था। हमारे यहाँ राधा और कृष्ण दो ऐसे शब्द हैं जो प्रेमी–प्रेमिका के रूप में रूढ़ हो चुके हैं। कवि अपने अन्तर्मन का भी हाल कहता है तो राधा और कृष्ण शब्द प्रयोग कर देने मात्र से खींचातानी मच जाती है। रीतिकाल के कवि भिखारी दास ने अपने ग्रन्थ 'काव्य निर्णय' में लिखा है –

आगे के कवि रीझिहैं तौ कविताई न तो,
राधिका कन्हाई सुमिरन कौ बहानौ हौ।"

विद्यापति की पदावली में भी 'राधिका', 'कन्हाई' सिर्फ बहाना है। वस्तुतः उनका उद्देश्य तो 'कवि रीझिहैं तौ कविताई' यानि शुद्ध श्रृंगारपरक रचना करना था।

इन्हीं सब स्थितियों को देखते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने व्यंग्य भरे शब्दों में लिखा है– 'आध्यात्मिक रंग के चश्में आजकल बहुत सस्ते हो गये हैं। उन्हें चढ़ाकर जैसे कुछ लोगों ने 'गीत गोविन्द' के पदों को आध्यात्मिक संकेत बताया है, वैसे ही विद्यापति के इन पदों को भी।[1]

विद्यापति का उद्देश्य न तो भक्ति काव्य लिखना था न वे वैष्णव भक्तों के उपजीव्य ग्रंथ श्रीमद्भागवत से प्रभावित जान पड़ते हैं। इसीलिए विद्यापति के कृष्ण के सौन्दर्य एवं विलासप्रियता के आगे शील और शक्ति का चित्रण नहीं किया। विद्यापति के कृष्ण में न तो दुष्टों का दलन करने वाली शक्ति की अवतारणा हुई है और न दीन दुखियों के विक्षुब्ध हृदय को शान्त करने वाले शील की की प्रतिष्ठा हुई है। विद्यापति के कृष्ण एक साधारण प्रेमी की तरह अपनी प्रेयसी का इंतजार करते हुए दृष्टिगत होते हैं, वहीं राधा काम–केलि प्रवीण नायिका के रूप में लोकमर्यादा की उपेक्षा करते हुए अश्लीलता की हद तक अपने हाव भाव को व्यक्त करते दिखाई पड़ती है। राधा के नीबीबंध को शिथिल करने में तनिक भी सोच न करने वाले कृष्ण हमारी भक्ति भावना के आलम्बन नहीं बन सकते –

'निवि–बन्धन हरि किए कर दूर, एहो पए तोहर मनोरथ पूर।
हेरने कओन सुख बुझ न विचारि, बड़ तुहु ढ़ीठ बुझल बनमारि।'

विद्यापति ने राधाकृष्ण की कथा को भक्त की दृष्टि से नहीं, एक श्रृंगारी कवि की दृष्टि से देखा है। पदावली के पदों को हम

पूर्वराग, मिलन, मान, दूती प्रसंग, अभिसार, विरह और मिलन इन शीर्षकों के अन्दर बांट सकते हैं। पदावली के प्रारम्भ में वयःसन्धि का चित्र अंकित किया गया है, आगे चलकर राधा और कृष्ण के नख–शिख सौन्दर्य एवं उनकी यौवन कालीन प्रेमक्रीड़ाओं का वर्णन किया गया है। इन सभी पदों में राधा और कृष्ण में नायक–नायिका भाव को प्रधानता दी गई है। राधा और कृष्ण के नख–शिख सौंदर्य, संयोग, वियोग आदि के जो चित्र पदावली में अंकित हैं; वे सब मांसल, मादक एवं वासनामय हैं –

"निरजन उरज हेरइ कत बेरि, हंसइ से अपन पयोधर हेरि।
'पहिल बदरि कुच पुन नवरंग, दिन–दिन बाढ़ए पिड़ए अनंग।
से पुनि भए गेल बीजक पोर, अब कुच बाढ़ल सिरिफल जोर।"

संयोग श्रृंगार के वर्णन में तो विद्यापति ने अनेक स्थलों पर औचित्य की सीमा का उल्लंघन करते हुए शृंगार रस के स्थूल, मादक चित्र अंकित किए हैं। इन चित्रों में कवि के श्रृंगारी हदय का स्पन्दन दृष्टिगत होता है, न जाने कैसे विद्वानों को विद्यापति के पदों में भक्ति का सोता फूटता नजर आता है।

'भक्त या श्रृंगारी' विद्यापति के इस विवाद में उनकी अन्य रचनाओं को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। 'पुरुष परीक्षा' और 'कीर्तिपताका' से ज्ञात होता है कि वे साहित्यशास्त्रगत अलंकार, रस, नायक–नायिका भेद आदि काव्यांगो के सूक्ष्म विवेचन से पूर्णतया परिचित थे। 'कीर्तिपताका' की ये उक्ति भी कवि की श्रृंगारी मनोवृत्ति का परिचय देती है– 'संसाररत्नं मृगशावकाक्षी रत्नं च श्रृंगाररसो रसानाम।' अपनी प्रारम्भिक रचना 'कीर्तिलता' में भी विद्यापति एक श्रृंगारी कवि के रूप में हमारे सामने आते हैं। 'कीर्तिलता' में उन्होंने जौनपुर की वेश्याओं के जो मनोरम चित्र अंकित किए हैं, वे विद्यापति की श्रृंगारप्रियता के परिचायक हैं। इसी प्रकार 'कीर्ति लता' के आरम्भ में उन्होंने सरस्वती को 'श्रृंगारादिरसप्रसाद लहरी' बताकर श्रृंगार रस के साथ अपना विशेष प्रेम व्यक्त किया है।

विद्यापति की पदावली में भक्ति भावना, आध्यात्मिकता एवं धार्मिक प्रेरणा कहीं भी लक्षित नहीं होती। विरह वर्णन सम्बन्धी पदों में विद्यापति पार्थिकता से कुछ ऊपर उठे हुए दृष्टिगोचर होते हैं पर यहाँ भी उनका भक्त रूप प्रकाश में नहीं आता। सूर जैसे भक्त कवियों के विरह वर्णन की तरह विद्यापति के विरह वर्णन में गम्भीरता, आध्यात्मिकता एवं शालीनता नहीं पाई जाती। जहाँ सूरदास की गोपियां कृष्ण के दर्शन मात्र से अपने को भाग्यशालिनी समझती हैं और दूर रहने पर कृष्ण के सुख की कामना करती हैं – 'जंह–जंह रहौ राज करा' वहीं विद्यापति की विरहिणी राधा अपने प्रिय कृष्ण के साथ शारीरिक सम्पर्क स्थापित करने के लिए उत्सुक दिखाई देती हैं–

'कत दिन पिय मोर पूछब बात, कबहुँ पयोधर देहब हाथ।
कत दिन पिय बैठाइब कोर, कत दिन मनोरथ पूरब मोर'।।'

भौतिकवाद से जरा भी दूर हटे प्रेमिका–प्रेमी अपने प्रेम एवं आकर्षण को जीवन–पर्यन्त बनाए रखना चाहते जबकि विद्यापति की राधा यौवन के ढल जाने पर प्रियतम के मिलन को निस्सार समझती है –

'जौवन बिनु तन तन विनु जौवन, की जौवन पिय दूरे।
ई नव जौवन विरह गमाओब, कि करब से पिया गेह।"

संस्कृत के काव्यशास्त्र से विद्यापति का प्रगाढ़ परिचय मालूम होता है। उनका काव्यशास्त्र विषयक ज्ञान पदावली के श्रृंगाररससिक्त पदों में पूर्णतया प्रस्फुटित हुआ है। श्रृंगार रस के आलम्बन विभाव, उद्दीपन विभाव, अनुभाव और संचारी भाव जैसे अवयवों का चित्रण विद्यापति ने काव्यशास्त्रगत रस विवेचन के प्रति सजग होकर एक श्रृंगारी कवि के रूप में किया है। काव्यशास्त्र के अतिरिक्त कामशास्त्र से भी उनका घनिष्ठ परिचय लक्षित होता है। पदावली में नायिका की वयः सन्धि, यौवनागम, प्रथम मिलन, प्रियसमागम आदि अवस्थाओं तथा भावदशाओं के विभिन्न काव्य चित्रों पर दोनों शास्त्रों का प्रभाव दृष्टिगत होता है और यहाँ विद्यापति काव्यशास्त्र तथा कामशास्त्र से पूर्णतया परिचित श्रृंगारी कवि के रूप में ही हमारे समक्ष आते हैं।

विद्यापति को भक्त कवि सिद्ध करने के लिए विभिन्न तर्कों को जो विद्वानों ने दिए हैं। उनका विवेचन यहाँ अपेक्षित है – चौतन्य महाप्रभु जो विद्यापति के गीत को गाते–गाते भाव विभोर हो जाते थे उसका कारण स्पष्ट है। चौतन्य देव जैसे वैष्णव भक्तों ने विद्यापति के पदों में राधा–कृष्ण का नाम देखकर और उनमें भाव प्रवणता एवं माधुर्य के प्रचुर परिमाण में उपलब्ध होने के कारण ही उन्हें कीर्तन में अपनाया और इस प्रकार धीरे–धीरे ये पद वैष्णवों की सम्पति बन गये।

बंगाल में विद्यापति के प्रेम गीतों पर यह भागवत रंजना क्यों चढ़ी इसका कारण बंगाल की ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक अवस्था में निहित हैं। बंगदेश में पंद्रहवी शताब्दी या उससे पूर्व से ही भक्ति का आवरण लिए हुए राधा कृष्ण के प्रेम गीत लोक जीवन में प्रचलित थे। उस वैष्णव भक्ति से आप्लावित वातावरण में विद्यापति के गीत सहज ही मधुर रस की पद–परम्परा की अग्रिम कड़ी बन गये।

जहाँ तक विद्यापति के पदों में यमुना, कदम्ब तरू, वंशी इत्यादि चीजों के आने का सवाल है तो ये सब विद्यापति को अपनी पूर्व परम्परा से मिले थे। 'वंशी' का उल्लेख केवल तीन पदों में मिलता है। ऐसे थोड़े से सतही तर्कों के आधार पर भक्त कवि सिद्ध करना न्यायसंगत नहीं प्रतीत होता। विद्यापति के सम्पूर्ण कृतित्व एवं व्यक्तित्व के आधार पर उनका श्रृंगारी रूप ही हमारे सम्मुख आता है।

विद्यापति के गीत अपनी जन्मभूमि की माटी की सोंधी गंध लिए हुए हैं। कवि ने 'देसिल बयना सब जन मिट्ठा' कहकर एवं उसको अपनी पदावली में उतारकर जन सामान्य के हृदय में अपना प्रभाव जमाया।

गौरतलब है पदावली के आरंभ में राधा और देवी की वंदना के रूप में दो पद पाए जाते हैं। देवी की वंदना में देवी के प्रति विद्यापति की भक्ति भावना स्पष्टतया व्यक्त होती है। यहाँ विद्यापति एक विनम्र सेवक के रुप में देवी के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं –

'विद्यापति कवि तुम पदसेवक पुत्र विसरु जाने माता।' किन्तु राधा की स्तुति के सम्बद्ध पद में तो कवि की श्रृंगारी भावना ही प्रस्फुटित हुई है – 'देख–देख राधा रूप अपार' विद्यापति की रंगीली राधा के सौन्दर्य को देखकर करोड़ों कामदेवों का मर्दन करने वाले संयमी जन भी पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। विद्यापति ऐसी सुन्दरी राधा के चरणों में भक्त की तरह नतमस्तक न होकर उसके चरण कमल को गोद में लेने के लिए लालायित दीख पड़ते हैं।

इन सब बिन्दुओं को देखते हुए विद्यापति को शुद्ध भक्त कवि मानना न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता।

विद्यापति के कुछ पदों के आधार पर अगर भक्त माना जाय तब तो हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्त कवियों को छोड़कर अन्य कुछ दिखेगा ही नहीं। इस आधार पर बिहारी– 'मेरी भव बाधा हरौ राधा नागर सोई' किसी भी कोण से किसी भक्त कवि से कम सिद्ध नहीं होते। विद्यापति की नायिका तो अपने प्रिय की छवि पाने के लिए व्याकुल हो रही थी। पदावली में ऐसे पद हैं जो अपनी उदात्ता को पहुंचे हैं – 'जनमि अवधि हम रूप निहारब, तबहुँ न तिरपित नेत्र।'

विद्यापति अगर लोकप्रिय हैं तो केवल अपने गीतों के बल पर। इनके पद मिथिला में खेत–खलिहानों से लेकर शादी–विवाह के

अवसर पर बड़े प्रेम से गाये जाते हैं। विद्यापति की पदावली इतनी मार्मिक एवं मानवीय संवेदनाओं को लिए हुए है कि विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने विद्यापति के पद को यह कहकर छाप दिया था कि 'यह पद मुझे इतना अच्छा लगता है कि मालुम होता है कि यह मेरा ही है।'

विद्यापति ने देशी भाषा में सरल पद लिखकर जितनी लोकप्रियता हासिल की; वह सबके लिए स्पृहणीय एवं अनुकरणीय है। तुलसी की लोकप्रियता का कारण धार्मिक विवेचन, राम लीलाएं एवं कथावाचक परम्परा रही है। जबकि विद्यापति केवल अपने गीतों के बल पर लोकप्रिय रहे हैं। विद्यापति की भावप्रवणता का अहसास तो तब होता है जब हम देखते हैं कि उनकी कविता में अलंकार अनायास ही भावों में लिपटकर चले आये हैं।

जहाँ तक भक्त कवि एवं श्रृंगारी कवि का सवाल है तो उसका विवेचन तो हो चुका है। पत्र के अन्त में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी एवं गुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर का उद्धरण देकर यह लेख समाप्त करूंगा। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कहा है – 'विद्यापति की राधा ईषदुदिभिन्न यौवना है, जयदेव की पूर्ण विलासवती प्रगल्भा और चन्डीदास की राधा उन्मादमयी मोम की पुतली।[2]

इस विषय में विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर के शब्द स्मरणीय हैं – "विद्यापति की राधा में प्रेम की अपेक्षा विलास अधिक है। इसमें गम्भीरता का अटल धैर्य नहीं, केवल नवानुराग की उद्भ्रान्त लीला और चांचल्य।"[3]

इस तथ्य को और विशद बनाते हुए विश्व कवि लिखते हैं – "विद्यापति सुख के कवि है, चंडीदास दुःख के। विद्यापति विरह में कातर हो उठते हैं, चण्डीदास को मिलन में भी सुख नहीं। विद्यापति जगत में प्रेम को ही सार मानते थे, चण्डीदास प्रेम को ही जगत समझते थे, विद्यापति भोग के कवि हैं चण्डीदास सहन के।"[4]

इन समस्त बिन्दुओं को हम देखते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि विद्यापति श्रृंगारी कवि थे। पदावली में अंकित चित्र भक्त हृदय की देन न होकर एक सहृदय श्रृंगारी कवि की कलाकृतियाँ हैं। विद्यापति अपने जीवन में चाहे शिव के भक्त रहे हों अथवा शक्ति के उपासक वे कम से कम कृष्ण के भक्तों में कदापि स्थान नहीं पा सकते। पदावली में भक्त हृदय का स्पन्दन नहीं दीख पड़ता उसमें तो श्रृंगारी कवि का उल्लासपूर्ण मादक स्वर ही मुखरित हुआ है। विद्यापति वास्तव में एक सच्चे कलाकार और श्रृंगारी कवि के रूप में ही हमारे सामने आते हैं। भक्त कवि मानने की अगर विवशता ही हो तो विद्यापति को भक्ति साहित्य का अग्रधावक माना जा सकता है; शुद्ध भक्त कवि कदापि नहीं।

संदर्भ ग्रंथ

1. हिंदी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. 32
2. 'विद्यापति और सूर काव्य में राधा' श्रीमती डॉ. कृष्णा शर्मा, पृष्ठ – 83
3. 'विद्यापति और सूर काव्य में राधा' श्रीमती कृष्णा शर्मा, पृष्ठ – 111
4. 'रीति काव्य और विद्यापति' – वीरेन्द्र कुमार वडसूवाला, पृष्ठ 229
5. 'विद्यापति तथा सूर काव्य में राधा' श्रीमती डॉ. कृष्णा शर्मा
6. 'विद्यापति युग और साहित्य' डॉ. अरविन्द नारायण सिन्हा
7. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
8. 'विद्यापति' शिवप्रकाश सिंह
9. 'रीति काव्य और विद्यापति' वीरेन्द्र कुमार वडसूवाला
10. 'विद्यापति की काव्य प्रतिभा'